जाती है फिर भी हम लोगों को कुछ फ़िकर नहीं होता है और हमारा झूठा अभिमान नहीं टूटता है, इस प्रकार अपनी भारी घटती होजाने से चाहिये तो यह था कि हम शर्मिंदा होते और झूठे घमंड का हमारा नशा टूटता परन्तु हम तो उलटे इस घटती से अधिक २ क्रश होकर अपने में से और भी कम करने की कोशिश कर रहे हैं और ज़रा ज़रा सी वात पर अपने भाईयों को धक्का देकर अपने से अलग कर देने में ही हर्ष मानते हैं और चाहे कोई अपने से भी अच्छे आचरण रखता हो उसको फिर अपने में शामिल कर लेने को तय्यार नहीं होते हैं अपना हृदय कठोर वनाये रखने में ही अपनी वड़ाई मानते हैं।

जव हृदय में धर्म की कमी होने से कपायों की प्रवलता हो जाती है तव तो ऐसा हुवा ही करताहै, इस वास्ते कुछ आश्चर्य की तो बात नहीं है किन्तु धर्म के ज्ञान और श्रद्धान की कमी को दूर करदेने की ही ज़रूरत है, तव भी लोगों को अपना कर्तव्य मालूम होगा, तवही वह रीति रिवाजों के कीचड़ से निकल कर धर्म मार्ग पर आवेंगे और तव ही धर्म से प्रीति होकर उसके थामने और दुनिया भर के मनुष्यों को जैनी बनाने का, डूबे हुवों को उभारने का, और पतितों को अपने में शामिल करने का उत्साह पैदा होगा, यह जो ३२ करोड़ मनुष्य इस समय हिन्दुस्तान में आवाद हैं और अनेक मिथ्या मत धारण किये हुवे हैं वह सब आप के भाई होते हैं जो आपकी वेपर-वाही से जो जैन धर्म छोड़ २ कर विधर्मी होते चले गये हैं और यह ३२ करोड़ की गिनती तो हिन्दुस्तान की ही आवादी की है, पंडित लोग तो आर्यावर्त को इतना लम्बा चौड़ा वताते हैं जितनी आज कल सारी ही दुनिया कही जाती है और जिस की आवादी अर्वों खर्वों की है, इस वास्ते जितनी दुनिया आज

कल मालूम है उस पर रहने वाले मनुष्य तो सब जैनी से ही विधर्मी बने हैं और शुद्ध आर्याओं की ही सन्तान हैं।

शास्त्रों में तो जाति से पतितों को और पतितों की सन्तान को भी फिर जाति में मिला लेने की और विधर्मियों को भी जैनी बनाकर उनकी जाति गोत्र और वर्ण आदिक बदल कर अपने समान उच्च बना लेने की आज्ञा है, परन्तु अब तो ऐसा ज़माना आ रहा है कि बचे कुचे ११ लाख जैनी भी अपने शास्त्रों की आज्ञा मानने को तय्यार नहीं होते हैं और प्रचलित रीति रिवाजों को ही अपना परम धर्म मान रहे हैं, देखो आदि पुराण में साफ़ लिखा है कि अगर किसी कारण से किसी के कुल में दोष लग गया हो अर्थात् वह या उनके पुरषा (बाप दादा) जाति में पतित होगये हों तो वह राजा आदि की आज्ञा से फिर शुद्ध होसकते हैं और यदि पतित होने से पहले उनके पुरषा (बाप दादा) ऊंची जाति के थे तो वह उस अपनी पहली ऊंची जाति में ही शामिल होसकते हैं और वैसे ही बन जाते हैं जैसे वह पतित होने से पहले थे।

कुतश्चित्कारणाद्यस्य कुलं संप्राप्त दूषणं,
सोऽपि राजादि संमत्या शोधयेत्स्वं कुलं यदा।
तदाऽस्योपनयार्हत्वं पुत्र पौत्रादि संततौ,
न निषिद्धं हि दीक्षार्हे कुले चेदस्य पूर्वजाः।

आदि पुराण पर्व ४० श्लोक १६८, १६९

इन श्लोकों में तो साफ़ साफ़ ही यह बात भी खोलदी है कि इस प्रकार फिर ऊंची जाति में चढ़ जाने से वह और उनकी सन्तान उस ही प्रकार दीक्षा ग्रहण करने और यज्ञोपवीत धारण करने के योग्य होजाती है जिस प्रकार पहले थे अर्थात धर्म साधन में वा लौकिक व्यवहार में, किसी भी बात

में उनमें फ़रक़ नहीं रहता है, वह तो भाइयों के भाई बन जाते हैं और मोक्ष के भी अधिकारी होजाते हैं।

इन श्लोकों में राजा आदि के द्वारा पतितों की शुद्धि का विधान किया है, अर्थात यदि राजा जैनी हो और जैन पंचायत का नायक हो तो वह अपनी सम्मति से जिस को योग्य समझे फिर विरादरी में चढ़ाये जाने की आज्ञा देदे और यदि राजा जैनी न हो और विरादरी के प्रबन्ध मे कुछ वास्ता न रखता हो तो विरादरी वा पंचायत ही उसको अपने में शामिल करले, इस ही वास्ते इस श्लोक में राजा के बाद आदि शब्द लगाया है अर्थात राजा वा अन्य कोई उसको जाति में चढ़ा सकता है।

इस प्रकार साफ़ २ आज्ञा होने पर भी आज कल के जैनी पतितों को अपने में शामिल नहीं करते हैं किन्तु जो पतित हुवा सो हुवा उसको वा उसकी सन्तान को फिर ऊपर चढ़ाना ही नहीं जानते हैं, अर्थात जाति से नीचे गिरा देने का तो शौक़ रखते हैं परन्तु फिर ऊपर चढ़ा लेने की बात को मानने के लिये तय्यार नहीं होते हैं, मतलब जिसका यह ही होता है कि आज कल के जैनी अपने को चौथे काल के जैनियों से अधिक शुद्ध और पवित्र मानते हैं, क्योंकि चौथे काल के जैनी तो इस शास्त्राज्ञा के अनुसार दूषित कलंकी पतित और जाति से गिरे हुओं को और उन की सन्तान को फिर अपने में शामिल कर लेते थे और दीक्षा धारण करने और जनेऊ लेने आदि के सब अधिकार दे देते थे इस कारण चौथे काल के जैनी तो भ्रष्ट थे परन्तु आजकल के जैनी शुद्ध और महा शुद्ध हैं क्योंकि जिसको एक बार जाति से गिरा देते हैं उसको वा उसकी सन्तान को फिर शामिल करने का नाम नहीं लेते हैं, परन्तु हे आज कल के जैनी भाइयो, चौथे काल के जैनी चाहे भ्रष्ट थे वा जो कुछ थे वह तो शास्त्र आज्ञा मान कर मोक्ष जाते थे

अधिकारी होते थे और मोक्ष जाते थे, और तुम चाहे शुद्ध हो या महा शुद्ध हो परन्तु शास्त्र आज्ञा न मानने के कारण मोक्ष प्राप्त करने के अधिकारी नहीं रहे हो अर्थात अपनी इस अकड़ और कठोरता के ही कारण महा पतित होगये हो।

इन श्लोकों में कोई शर्त इस बात की नहीं लगाई गई है कि कब पतितों को शुद्ध कर लिया जावे अर्थात् जाति में शामिल कर लिया जावे किन्तु राजा आदि अर्थात् राजा और बिरादरी और पंचायत पर ही इसका न्याय छोड़ दिया है, और ऐसा करना ठीक भी है क्योंकि राजा या पंचायत ही तो दोषी को पतित करने वाले होते हैं, इस कारण वह ही अपनी सम्मति से जब उनको इस योग्य समझें अपने में शामिल कर सक्ते हैं, परन्तु इस समय हज़ारों और लाखों ही ऐसे हैं जो पतित हैं और जिनके आचरण यदि ऊंची जाति वालों जैसे ऊंचे नहीं हैं तो उनसे घटिया भी नहीं हैं वल्कि किसी २ पतित के आचरण तो किसी२ ऊंची जाति वाले के आचरण से भी बहुत उत्तम और ऊंचे है, तब यदि जात बिरादरी और पंचायत ऐसों को भी ऊंचा नहीं चढ़ाती हैं, अपने में शामिल नहीं करती है तो यह ही समझना चाहिये कि वह शास्त्रों की आज्ञा न मान कर अपने पड़ोसी अन्य मतियों के रीतिरिवाजों को मानना ही इष्ट समझती है और अपने पतित भाइयोंके साथ इस प्रकार का महा कठोरता का व्यवहार करने में और दया धर्मको भूल जाने में ज़रा नहीं लजाती है।

जैन शास्त्रों में तो ग़ैर जातग़ैर गोत्र और ग़ैर वर्ण वाले अन्य मति को भीजैनी बनाकर उनकी जाति गोत्र और वर्ण बदल कर अपने में मिला लेने का साफ़ साफ़ विधान है, इस ही कारण आदि पुराण में लिखा है कि जब अन्य मती को मोक्ष मार्ग का उपदेश देकर जैन धर्म की तरफ़ लगाया जावे जिससे वह

मिथ्या मार्ग को छोड़कर अपनी बुद्धि इस कल्याण कारी जैन धर्म में लगावे तो उस समय धर्मका उपदेश देने वाला गुरू ही उसका पिता और तत्वोंका ज्ञान होना ही उसका गर्भ होजाता है, उस गर्भ से वह धर्म रूप जन्म धारण कर अवतीर्ण होता है अर्थात् अपने मिथ्या धर्म को छोड़ कर जब कोई जैन धर्म धारण करता है तो मानो उसका नया ही जन्म होजाता है, इसही कारण उसकी यह अवतार क्रिया गर्भाधान क्रिया के समान मानी जाती है।

अवतार क्रियाऽस्येषा गर्भाधान वदिष्यते ।

आदि पुराण पर्व ३९ श्लोक ३५

फिर उसको व्रतादि ग्रहण कराकर श्रावक की दीक्षा दी जाती है अर्थात् श्रावक बना लिया जाता है और वह पूजा उपवास आदि श्रावक की सब ही क्रिया करने लगता है। और फिर जनेऊ भी धारण कर लेता है फिर वह अपनी पहली जाति और गोत्र को छोड़कर जैन धर्म के अनुसार जाति और गोत्र के दूसरे ही नाम धारण कर लेता है अर्थात् अपनी जाति और गोत्र बदल कर दूसरी ही जाति और गोत्र का होजाता है।

जैनोपासक दीक्षास्यात्समयः समयोचितं ।
दधतो गोत्र जात्यादिनामांतर मतः परं ॥

आदि पुराण पर्व ३९ श्लोक ५६

फिर वह अपनी स्त्री को भी जैनी बनाकर उसको श्रावक के व्रत ग्रहण कराता है और अपनी स्त्री के साथ फिर दो बारा जैन धर्म के अनुसार विवाह करता है क्योंकि उसका पहला विवाह तो मिथ्यात की ही रीति से हुवा था जो जैनियों के वास्ते उचित विवाह नहीं समझा जासकता है।

पुनर्विवाह संस्कारः पूर्वः सर्वोऽस्य संमतः
सिद्धार्चनां पुरस्कृत्य पत्न्याः संस्कार मिच्छतः

आदिपुराण पर्व ३९ श्लोक ६०

फिर अपने समान षट् कर्म करने वाले अन्य श्रावकों के साथ संबन्ध करने की इच्छा करने वाले इस भव्य पुरुष की वर्ण लाभ क्रिया की जाती है, अर्थात् उसका वर्ण भी बदल दिया जाता है इसके लिये उसको चाहिये कि वह बड़े २ चार श्रावकों को बुलाकर अर्थात् बिरादरी के पंच पटैलों और चौधरी चुकड़ायतों को इकट्ठा करके कहे कि आप लोगों को मुझे अपने समान बनाकर मेरा उपकार करना चाहिये, मैंने गुरू की कृपा से नवीन जन्म धारण किया है, अर्थात् जैन धर्म धारण करने से मानो मेरा नवीन जन्म ही हुवा है, और मैंने अपनी स्त्री को भी जैनी बनाकर उससे दोबारा ब्याह कर लिया है।

पत्नी च संस्कृताऽस्मीया कृत पाणि ग्रहा पुनः

आदिपुराण पर्व ३९ श्लोक ६७

इत्यादिक उसकी प्रार्थना सुनकर वह लोग उसको खुशी से अपने वर्ण में शामिल करके अपने समान कर लेवें, इसके बाद दीक्षा धारण करके मुनि होने तप करने आचार्य वा उपाध्या बनने और केवल ज्ञान और मोक्षप्राप्त करने आदि की जो क्रियायें जन्म के जैनों के वास्ते हैं वह ही सब उस ही रीति से इस नवीन जैनी के वास्ते होती हैं ऐसा शास्त्र में साफ़ २ लिख दिया है, जन्म के जैनी में और इस नवीन जैनी में कुछ भी फरक नहीं रहता है, (देखो आदिपुराण पर्व ३९ श्लोक ६० से ७० तक) इस प्रकार अन्य मतयों को जैनी बनाकर और उनका गोत, जाति और वर्ण सब अपने समान बनाकर अपने में शामिल करलेने की साफ़ २ आज्ञा जैन शास्त्रों में है, पहले

ज़माने में इसही प्रकार अन्य मतियों को जैनी बनाया जाता रहा है तब ही तो जैन धर्म क़ायम रहा है और सारे जगत में अपना डंका बजाता रहा है, परन्तु अवतो ज़ैनियों ने अपने धर्म की सबही रीति नीतिको छोड़कर अनेक बातों में हिन्दुओं की ही रीति नीति को ग्रहण कर लिया है और नवीन जैनी बनाकर अपने धर्म को वढ़ाने के स्थान में अपने में से निकाल बाहर करना ही अंगीकार कर लिया है और निकले हुवे को वा उसकी सन्तान को फिर वापस लेना भी बन्द कर दिया है, नतीजा उसका यह हुवा कि दिन दिन जैनी घटते जारहे हैं और घटते घटते सारी पृथ्वी पर इस समय ग्यारह लाख ही रह गये हैं और इन में भी दिन दिन कमी होती जारही है जिससे इनके शीघ्र ही समाप्त होने की सम्भावना होगई है, जैनी भाइयो आँखें खोलो जैन शास्त्रों की आज्ञा मानो और सच्चे जैनी बनकर शीघ्र ही अपनी रीति नीति को बदलो नहीं तो यह जैन धर्म तुम्हारी बे परवाही के कारण समय से पहले ही पृथ्वी से उठ जाने वाला होरहा है, जिस प्रकार बौद्ध धर्म हिन्दुस्तान में ही पैदा हुवा. हिन्दुस्तान में ही फला फूला और सारे भारत भर में फैला परन्तु बौद्ध धर्मियों की ही बे परवाही से फिर घटते २ ऐसा घटा कि इस हिन्दुस्तान में एक भी बुद्ध धर्मी न रहा, ऐसा ही जैन धर्म का हाल होता नज़र आता है परन्तु बौद्ध धर्म तो हिन्दुस्तान से बाहर भी फैल चुका था इस कारण हिन्दुस्तान में उसकी समाप्ती होजाने पर उसकी पूर्ण समाप्ती नहीं हुई किन्तु चीन तिब्बत और जापान आदि देशों में वह बराबर बना रहा परन्तु जैन धर्म तो हिन्दुस्तान के सिवाय बाहर अन्य किसी भी देश में नहीं है इस कारण इस के तो हिन्दुस्तान में समाप्ति होजाने से सम्पूर्ण ही समाप्ति हो जायगी और यह सब अपराध तुम्हारीही गर्दन पर होगा।

जैन धर्म में तो नीचो को ऊंचा बनाने का भी बहुत कुछ विधान है जैसा कि आदिपुराण के पर्व ४२ श्लोक १७ में स्पष्ट आज्ञा दी गई है कि अनक्षर म्लेच्छों अर्थात जङ्गल में रहनेवाले भील और गौंड आदिकों को भी कुल शुद्धि करके अपने में मिलालो।

स्वदेशेऽनक्षर म्लेच्छान्प्रजा बाधाविधायिनः।

कुलशुद्धिप्रदानाद्यैः स्वसात्कुर्यादुपक्रमैः॥

इसही प्रकार आदिपुराण आदि ग्रन्थों में यह भी कथन है कि भरत महाराज ने छः खंड पृथ्वी जीत लेने के बाद, गृहस्थी धर्मात्माओं का आदर सत्कार करने के लिये सब ही राजाओं को आज्ञा भेजी कि तुम्हारे राज्य में जो जो कोई सदाचारी हों वह राजा हों मित्र हों सम्बन्धी हों वा नौकर चाकर हों अर्थात् क्षत्रिय हों वैश्य हों वा शूद्र हों कोई हों किन्तु सदाचारी धर्मात्मा हों वह सब अलग २ हमारे उत्सव में आवें।

इति निश्चित्य राजेंद्र सत्कर्तुमुचितानिमान्

परि चिक्षिपुरहास्त तदा सर्वान्महीभुजः

सदाचारैर्निजैरिष्टैरनुजी विभिरन्विताः

अद्यास्मदुत्सवे यूयमायातेति पृथक् पृथक्

आदि पुराण पर्व ३८ श्लोक ९,१०

फिर इस प्रकार आये हुवे नानों वर्णों के पुरुषों में से जिनको भरत महाराज ने अपनी जाँच में धर्मात्मा समझा उन सबको यज्ञ सूत्र पहना कर उनका तीनों वर्णों से भी ऊँचा चौथा ब्राह्मण वर्ण बना दिया, और पहिले चाहे कोई ऊँचो जाति का था या शूद्र था चाहे जो था परन्तु अपने उत्तम धर्म आचरण के कारण ब्राह्मण बनने से उनको मुनि होकर मोक्ष पद को

साधना करने और मुक्ति प्राप्त करने का अधिकार होगया, महाराज भरत ने द्वादशांग में से उपास का ध्ययन नाम के सातवें अंग से उन लोगों को इज्या अर्थात् भगवान की पूजा करना, और वार्ता अर्थात् शुद्ध आचरणों के साथ खेती वा व्यापार आदि करके आजीविका पैदा करना और दान, स्वाध्याय, संयम और तप करने का उपदेश दिया, इस प्रकार इनकी आजीविका पाप रहित होजाने से इनकी जाति भी उत्तम होगई और दान पूजन और पठन पाठन में अधिक अधिक लगने से व्रतों में अधिक २ शुद्धि होने से वह उत्तम जाति और भी ज़्यादा उत्तम हो सकती है।

अपापोपहतावृत्तिः स्यादेषां जातिरुत्तमा
दत्तीज्याधीतिमुख्यत्वाद् व्रत शुध्यासुसंस्कृता

आदि पुराण पर्व ३८ श्लोक ४४

क्यों उनकी जाति उत्तम हो जाती है इसका कारण अगले श्लोक में इस प्रकार वर्णन किया है कि मनुष्य जाति नाम कर्म के उदय होने से ही मनुष्य पर्याय में उत्पन्न होता है इस कारण जन्म से तो सब मनुष्यों की एक मनुष्य जाति ही है फिर जैसी जैसी वह आजीविका करने लगते हैं उसही से उनके ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य और शूद्र यह चार भेद हो जाते हैं।

मनुष्य जातिरेकैव जाति नामोदयोद्भवा
वृत्ति भेदा हितद्भेदाच्चातुर्विध्यमिहाश्नुते

आदि पुराण पर्व ३८ श्लोक ४५

फिर इससे अगले श्लोक में इस बात को और भी ज़्यादा साफ़ करने के लिये बिल्कुल खोल कर ही बता दिया है कि जो व्रतधारी हो वह ब्राह्मण कहलाता है जो शस्त्र धारण करे वह क्षत्रिय, न्यायपूर्वक धन कमावे वह वैश्य और जो नीच कामों

के करने से अपनी आजीविका करता है वह शूद्र कहलाता है, अर्थात् जो जैसी आजीविका करने लगे वह वैसा ही हो जाता है।

ब्राह्मणा व्रत संस्कारात् क्षत्रियाः शस्त्र धारणात्
वणिज्योऽर्थार्जनान्न्यायात् शूद्रा न्यग्वृत्तिसंश्रयात्

आदि पुराण पर्व ३८ श्लोक ४६

आगे चलकर इस ही कथन में जिस जीव के मोक्ष की प्राप्ति निकट हो जाती है अर्थात् जिसका मन धर्म की तरफ अधिक झुक जाता है उसकी क्रियाओं को वर्णन करते हुवे लिखा है कि मनुष्य जन्म धारण करने से ही निकट भव्य की सज्जाति अर्थात् दीक्षा धारण करने के योग्य उत्तम जाति होती है।

तत्र सज्जातिरित्याद्या क्रिया श्रेयोऽनुबंधिनी
यासाचा सन्न भव्यस्य नृजन्मोपगमे भवेत्

आदि पुराण पर्व ३९ श्लोक ८२

इस ही को फिर और स्पष्ट करने के लिये लिखा है कि यह तो शरीर जन्म से सज्जाति अर्थात् उत्तम जाति का होना है और संस्कारों से उत्पन्न हुवे जन्म से अर्थात् धर्म क्रियाओं के करने से जो उत्तम जाति बनती है द्विजपना अर्थात् असली उत्तम जाति का होना उस ही से प्राप्त होता है।

संस्कार जन्मनाचान्या सज्जातिरनुकीर्त्यते
यामासाद्य द्विजन्मत्वं भव्यात्मा समुपाश्नुते

आदि पुराण पर्व ३९ श्लोक ८९

यह संस्कार जन्म ज्ञान प्राप्त करने से होता है, जब भव्य पुरुष श्री सर्वज्ञ देव के वचनों से उत्तम ज्ञान प्राप्त करता है अर्थात् जैन धर्म के स्वरूप को समझ लेता है तो मानो वह इस उत्तम ज्ञानरूपी गर्भ से संस्कार रूपी नवीन जन्म लेता है, और

पांच अणुव्रत और सात शीलव्रत इस प्रकार श्रावक के बारह व्रत ग्रहण करके द्विज हो जाता है अर्थात् श्रावक की दूसरी प्रतिमा धारण करने से ही मनुष्य द्विज अर्थात् उत्तम जाति का हो जाता है

ज्ञानजः तु संस्कारः सम्यग्ज्ञान मनुत्तरं
यदाऽथ लभते साक्षात्सर्व विन्मुखतः कृती
तदैष परमज्ञान गर्भात्संस्कार जन्मना
जातोभवेद्द्विजन्मेति व्रतैः शीलैश्चभूषितः

आदि पुराण पर्व ३९ श्लोक ९२, ९३

ऐसा संस्कार जन्म धारण करने से ही उसकी सज्जाति हो जाती है अर्थात् वह उत्तम जाति का होजाता है और सत्य शौच क्षम दम आदि धर्म सम्बन्धी उत्तम आचरणों को धारण करने से वह देव ब्राह्मण अर्थात् पूजनीय धर्मात्मा होजाता है।

धर्म्यैराचरितैः सत्य शौच क्षांति दमा दिभिः
देव ब्राह्मण तां श्लाघ्यां स्वस्मिन्संभावयत्यसौ॥

आदि पुराण पर्व ३९ श्लोक १०७

फिर इससे आगे लिखा है कि यदि इस देवब्राह्म , अर्थात् धर्मात्मा पुरुष को कोई आदमी अपनी ऊंची जाति के घमंड में यह कहे कि क्या तू अमुक आदमी का बेटा नहीं है और क्या तेरी माँ अमुक की बेटी नहीं है तब तू क्यों ऊंची नाक करके हमको प्रणाम किये बिदून नहीं चला जा रहा है, अर्थात् तू तो जाना बूझा वंश और उस जाति का आदमी है तब अब अपने को बहुत बड़ी ऊंची जाति वाला क्यों मानने लगा है।

त्वामामुष्यांयणः किन्तकिंतेऽवाऽमुष्यपुत्रिका
येनैवमुन्नसोभूत्वायास्यसत्कृत्यमद्विधान्

आदि पुराण पर्व ३९ श्लोक १०९

इसी प्रकार और भी स्पष्ट तौर पर उलाहना देवे कि तेरी जाति वह ही है जो पहले थी और तेरा कुल भी वह ही है जो पहले था और तू भी वह ही है जो पहले था तो भी तू आज अपने को देवस्वरूप अर्थात् बहुत बड़ा मान रहा है,

जातिः सैव कुलंतच्च सोऽसियोऽसि प्रगेतनः
तथाऽपिदेवनात्मानमात्मानं मन्यते भवान् ।

आदि पुराण पर्व ३९ श्लोक ११०

इसी प्रकार यह और भी उलाहना देकर कहने लगे कि तेरे जैनी होजाने से और जैन धर्म के अनुसार सब आचरण करने लगने से तुझे कौनसा अतिशय प्राप्त होगया है अर्थात् कौन सी बड़ाई मिल गई है, तू तो अब भी वह ही आदमी ही है और धरती पर ही पैर धर कर चलता है फिर तू अपने को ऐसा बड़ा क्यों समझने लगा है और हमको नमस्कार क्यों नहीं करता है, इस प्रकार अत्यन्त क्रोध करता हुवा यदि कोई अपनी ऊँची जाति का घमँड करने वाला उलाहना देने लगे तो उसको यह उत्तर देना चाहिये, कि ऊंची जाति में पैदा होने का घमंड करने वाले तू आज मेरा दिव्य जन्म सुन, श्री जिनेन्द्र देव तो मेरा जन्म दाता है अर्थात् श्री जिनेन्द्र देव की वाणी के ग्रहण कर लेने से ही यहां मेरा नवीन जन्म हुवा है उन के वचनों का ज्ञान होना अर्थात् जिन वाणी का समझ लेना तो मेरा अत्यन्त निर्मल गर्भ है, उस गर्भ में सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञान और सम्यक् चरित्र यह तीन शक्ति प्राप्त करके मैं इस संस्कार रूपी जन्म से पैदा हुवा हूं, माता के पेट से जो पैदा होना है वैसा घृणित जन्म यह मेरा नहीं है किन्तु सत्य धर्म धारण करना ही यह मेरा महा पवित्र जन्म है इस कारण मैं साधारण मनुष्यों जैसा नहीं हूं किन्तु देव ही होगया हूं

मेरेजैसे और भी जो कोई सत्य धर्म. ग्रहण करके यह नवीन पवित्र जन्म प्राप्त करले उसको भी तू देव ब्राह्मण अर्थात् ब्राह्मणों की जाति से ऊँची जाति का मान,

तत्राहंती त्रिधा भिन्नां शक्तिगुण्य संश्रितां।
स्वसात्कृत्य समुद्भूता वयं संस्कार जन्मना ॥
अयोनि संभवास्ते न देवा एव न मानुषाः
वयं वयमिव ह्यान्येऽपि संति चेद्ब्रूहि तद्विधान्

आदि पुराण पर्व ३९ श्लोक ११५-११६

आगे चलकर फिर साफ़ वर्णन किया है कि जन्म दो प्रकार का होता है एक तो माता पिता के रुधिर और वीर्य से माँ के पेट से जन्म होना, यह तो शरीर जन्म है यह जन्म प्रशंसनीय जन्म नहीं है दूसरा जन्म मिथ्यात्व को छोड़कर जैन धर्म धारण करना है, अर्थात् इस जन्म से कोई ऊँचा नहीं माना जासकता है, यह ही उत्तम शुद्ध और पवित्र जन्म है, मुझे इन दोनों जन्मों मेंसे वह जन्य जो दूषित नहीं है किन्तु पवित्र और शुद्ध है वह ही जन्म गुरू की आज्ञानुसार संस्कारों से अर्थात् जैन धर्म धारण करने से प्राप्त हुवा है, इस वास्ते मैं देव द्विज अर्थात् सब से ऊँची जाति वाला हूं।

तत्र संस्कार जन्मेदम पापो पहतं परं।
जातनो गुर्वनु ज्ञानतादतो देवद्विजा वयं ॥

आदि पुराण पर्व ३९ श्लोक १२४॥

आगे चल कर फिर यह ही कहा है कि जो भी जिनेंद्र देव के निर्मल ज्ञान रूपी गर्भ से जन्म लेते हैं अर्थात् जो श्री जिनेंद्र भगवान की वाणी पर श्रद्धान लाकर जैन धर्म धारण करते हैं वह ही द्विज अर्थात् ऊँची जाति वाले हैं।

दिव्य मूर्तेर्जिनेंद्रस्य ज्ञानगर्भादनाविलात् ।
समासादित जन्मानो द्विजन्मानस्ततो मतः ॥

आदि पुराण पर्व ३९ श्लोक १३० ॥

इसके अगले श्लोक में फिर कहा है कि जैन धर्म धारण करके जो व्रत मन्त्र आदिक से भी सस्कारित होजाते हैं अर्थात् अनुव्रत धारण करके व्रती श्रावक होजाते हैं, दूसरी प्रतिमाधारी गृहस्थी बनजाते हैं वह तो ऐसे महान् उत्तम जाति के होजाते हैं कि सब ही ऊँचे वर्णों से बाहर निकल जाते हैं, अर्थात् ऊँचे वर्णों से भी ऊँचे होजाते हैं ।

वर्णांतः पातिनो नैते मंतव्याद्विज सत्तमः ।
व्रत मन्त्रादि संस्कार समारोपित गौरवाः ॥

आदि पुराण पर्व ३९ श्लोक १३१ ॥

आगे चल कर इस बात को बिल्कुल ही साफ़ कर दिया है और लिख दिया है कि जो कोई भी जैन धर्म धारण कर लेता है वह ही सब जीवों पर दया रखने के कारण और आजीविका भी पाप रहित करने लग जाने के कारण सब ही वर्णों से उत्तम हो जाता है ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य और शूद्र यह जो संसार में चार वर्ण हैं जैन धर्म धारी को तो इन चारों वर्णों में से किसी में भी नहीं गिनना चाहिये, क्यों कि जैनी तो सब से ही ऊँचे हैं और जगत पूज्य हैं, भावार्थ यह है कि ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य और शूद्रादिक का भेद तो सब दुनिया दारी के ही झगड़े हैं, जिसने जैन धर्म धारण कर लिया उसके वास्ते इस बात का झगड़ा क्या कि वह ब्राह्मण व क्षत्रिय व वैश्य व शूद्र है, जैन धर्म धारण करने से तो वह इन चारों वर्णों से भी ऊँचा होजाता है, इस भेद भाव से ही बिल्कुल बाहर होजाता है, अर्थात् उसमें तो इस भेद भाव की ज़रूरत ही नहीं रहती

है, यह ही जैन धर्म धारण करने का अतिशय है।

विशुद्ध वृत्तयस्तस्माज्जैनावर्णोत्तमा द्विजाः।
वर्णांतः पातिनोनैते जगन्माना इतिस्थितं ॥

आदि पुराण पर्व -६ श्लोक १४२ ॥

इस प्रकार जैन शास्त्रों में तो सब ही वर्णों के आदमियों को जैनी बना कर और उनका आचरण और आजीविका शुद्ध करके अपने में मिला लेने की खुली आज्ञा दी है और ऐसा करने के लिये बड़ा भारी जोर भी दिया है जिससे जैनी होकर सब ही जीवों का कल्याण हो और उनको मिथ्यात्व के कीचड़ से निकाल कर सत्य धर्म पर लगा देने से हमारा भी दया धर्म पले, परन्तु शोक है कि हम अपने शास्त्रों की यह सब ही आज्ञा भुला बैठे हैं और अन्य मतियों के ही सब रीतिरिवाजों को ग्रहण करके जाति पांति की ही खेंच तान में पड़ गये हैं, दया धर्म को त्याग कर अपनी जाति और कुल का घमंड करना ही परम धर्म मान बैठे हैं अर्थात् जैनी होकर भी जैन धर्म को भूल गये हैं क्यों कि जैन धर्म में तो जाति और कुल का मद करना जैन धर्म के श्रद्धान में हानि कारक और दूषण पैदा करने वाला ही बताया है।

इस कारण हे जैनी भाइयों जैनी बनो और दूसरों को जैनी बना कर अपने में शामिल करने की कमर बाँधो और पतितों को भी ऊपर चढ़ाओ, जिनमें कुछ दूषण लग गया हो उनको भी और उनकी सन्तान को भी गले लगाओ और दया धर्म को सार्थक कर दिखाओ, अपने आचार्यों और शास्त्रों की आज्ञा मान कर सच्चे जैनी कहलाओ, जैन धर्म को समाप्त होने से बचाओ और अपनी सच्ची श्रद्धा दिखाओ।

जैन संगठन सभा देहली के उद्देश्य और नियम

उद्देश्य—

(१) जैन जाति के विभिन्न समुदायों का पारिस्परिक प्रेम पूर्वक संगठन करना।

(२) आपस की अवनति के कारणों को रोकना तथा सुरीतियों का प्रचार करना।

(३) जैनियों के हित की जहाँ और जब आवश्यकता हो रक्षा व उन्नति करना।

(४) हिन्दू मात्र से पूर्ण सहानुभूति रखना।

सभासदी नियम—

(१) सभासदी प्रतिज्ञा पत्र पर हस्ताक्षर करने पर १६ वर्ष से अधिक उम्रवाला हरेक स्त्री पुरुष सभासद हो सकेगा।

(२) सभासद दो प्रकार के होंगे।

(क) (साधारण) चन्दा न देकर सभा की सहायता तन मन से करें।

(ख) (सहायक) वार्षिक चन्दा कमसे कम १।) रुपये वार्षिक पेशगी दें।

मन्त्री—

जैन संगठन सभा, देहली।